दीक्षा, बीज, नाम

माँ के यहाँ आने पर यह भी सुना कि दोनों जून जप करने के लिए माँ ने सती को नाम दिया है। मैंने माँ से पूछा–"माँ, क्या तुमने दोनों वक्त जप करने के लिए सती को नाम दिया है?"

माँ–हाँ, नाम दिया है, पर वह दीक्षा नहीं है।

मैं–दीक्षा किसे कहते हैं?

माँ–गुरु जब बीज देते हैं तब दीक्षा होती है।

मैं–तुम दीक्षा के साथ बीज को क्यों जोड़ रही हो? क्या केवल नाम से दीक्षा नहीं होती?

माँ–शिष्य में बीज का संस्कार रहने पर गुरु दीक्षा के समय बीज देते हैं।

अब आगे दीक्षा के बारे अन्य कोई प्रश्न नहीं पूछा। मुझे यह जानने की उत्सुकता हुई कि सती को माँ ने कौन सा नाम दिया है। मुझे विश्वास हो गया कि माँ अगर कोई नाम बतायी होंगी तो मैं उसीको दीक्षा समझ लूंगा। लेकिन मुझे यह बात अच्छी तरह मालूम है कि आज तक माँ ने किसी को कोई नाम नहीं दिया है। इसलिए मैंने माँ से कहा–"अच्छा, मैं उसे (सती को) कोई नाम जप करने को कहूँ और तुम उसे कोई नाम जपने को कहो तो इन दो प्रकारों में कोई प्रभेद होगा या नहीं? तुम्हारी बातें तो शक्तिपूर्ण होती हैं।"

माँ–प्रभेद तो होगा ही। लेकिन तुम यह मत समझ लेना कि मैंने उसे कोई नाम बताया है। पूजा समाप्त होने के बाद शंकरानंद ने उन लोगों को एक नाम जपने को कहा, तब मैंने उन लोगों से कहा– 'तुम लोग यही नाम दोनों वक्त जपते रहना।'

मैंने गौर किया कि मेरा अनुमान सत्य है। माँ नाम देनेवाली पात्र नहीं है। तब मैंने माँ से कहा–'तुम भागने का मार्ग बनाकर सब काम करती हो।'

माँ खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोलीं–'पिताजी कैसे घुमाफिराकर सवाल करते हैं।'

मैं – बीज न पाने पर क्या नाम से काम हो जाता है?

माँ – हाँ, नाम से होता है। क्या तुमने नहीं देखा कि छोटे बच्चे 'माँ' नहीं कह पाते? लेकिन यही बच्चे जब रोने लगते हैं तब माँ समझ जाती हैं कि बच्चा उसे बुला रहा है। यही बच्चे बड़े होने पर माँ को न बुलाकर जब रोते है। तब माँ नहीं समझ पाती कि बच्चा उसे बुला रहा है। इसी प्रकार अज्ञान स्थिति में किसी भी नाम से भगवान को बुलाये, उसे वे जान लेते हैं।

बच्चों को धर्म–पथ पर ले जाना चाहिए

इसके बाद माँ सती के बारे में बातें करने लगीं। उन्होंने कहा–'तुम लोग कुमारी–पूजा के समय नहीं थे। अगर रहते तो एक तमाशा देखते। भ्रमर जब इनकी पूजा करती रही तब उसके (सती के) मुख की ओर देखा तो एक दिव्य आभा प्रस्फुटित हो रही थी। यह पूजा के गुण थे। अगर तुम लोग भावों के द्वारा पूजा करो तो जिसकी पूजा करोगे, उसमें भी वही भाव प्रस्फुटित होंगे। उसकी पूजा जब हो गयी तब वह बहुत प्रसन्न थीं और हँसती हुई मुझसे बोली–'माँ, क्या मैं प्रत्येक रविवार को शिवपूजा करूँ?' ढाका में रहते समय कभी वह मुझसे बातचीत नहीं की। केवल काकुल की आड़ से मुझे देखा करती थी। लेकिन आज पूजा के बाद उसकी लज्जा दूर हो गयी और मुझसे उक्त प्रश्न उसने पूछा। मैंने कहा–'तेरा मन पूजा करने को हो तो करना। पर शिवपूजा के लिए प्रशस्त दिन है–सोमवार। तुझे तो स्कूल जाना पड़ता है अतएव तू रविवार को पूजा कर सकती है और अगर छुट्टी रहे तो सोमवार को करना।'

मैं – अगर पूजा करना है तो बताओ। मैं काशी जाकर उसके लिए वाणलिंग ले जाऊँ। मुझे तो काशी जाना ही है।

माँ – नहीं, तुम्हें यह सब करने की जरूरत नहीं है। वाणलिंग ले जाने पर नित्य पूजा करना पड़ेगा। उसे तो रोज पूजा करना नहीं है। उसकी जिस दिन इच्छा होगी, उस दिन सारा प्रबन्ध कर देना। किसी विषय पर जोर नहीं देना चाहिए। जिससे समस्त चीजें अपने आप स्पष्ट हो जाँय, वही करना चाहिए। देखो होगा, पेड़ पर जो फल पककर फट जाता है, वही खाने में सब से मधुर लगता है। उसी प्रकार बच्चों में अच्छी वृत्तियां अपने आप प्रकट होने देना उचित है। माता–पिता का कर्तव्य है कि जिससे यह सब प्रकट हो, सहायता करनी चाहिए, पथ–रोध नहीं करना चाहिए। कल तुमने उसकी शिवपूजा के बारे में प्रश्न किया था। उस समय मैंने कहा था कि पहले पूजा हो जाने दो, बाद में देखा जायगा। अब तो मैं यह देख रही हूँ कि वह स्वयं ही पूजा के बारे में प्रश्न कर रही है।

मेरी इच्छा अप्रतिहत

इसके अलावा तरह–तरह की बातें चलती रहीं। पता नहीं किस बात पर मैंने माँ से पूछा–"माँ, कोई जो काम नहीं कर सकता, उसे वही काम करने का आदेश देती हो।"

माँ – यह सवाल क्यों कर रहे हो?

मैं – ढाका के आश्रम में एक दिन एक कुली को कटहल के पेड़ के नीचे सूर्यास्त तक नाम करने को तुमने कहा था। क्या तुम यह नहीं जानती थी कि उससे यह नहीं हो सकेगा। नलहाटी में जिन दिनों तुम थीं, उन्हीं दिनों अटल बाबू[1] को अपने निकट आकर रहने

१. श्रीयुक्त अटल बिहारी भट्टाचार्य एम.ए.। आप राजशाही कालेज के अध्यापक और माँ के पुरातन भक्त है।

को कहा था। क्या उस समय यह नहीं जानती थी कि अटल बाबू अपनी गृहस्थी से अलग रहने में असमर्थ हैं?

माँ – (हँसकर) तुम सारी बातें नहीं जानते, इसीलिए ऐसा कह रहे हो। मैं जिसे जो कुछ कहूँगी, उसे करने को वह बाध्य होगा। उसमें इतनी शक्ति नहीं होगी कि वह नहीं कर सकता। मेरी इच्छा अप्रतिहत है। तुमने जिस कुली की चर्चा की, वह मुझसे एक आदेश पाने के लिए परेशान कर रहा था, इसीलिए मैंने कहा था–'जाओ, उस पेड़ के नीचे बैठकर सूर्यास्त तक नाम करते रहो।' यह आदेश देते समय ही मैं जान गयी थी कि वह ऐसा नहीं कर सकेगा। रही अटल बाबू की बात, क्या तुमने कुछ सुना नहीं है?

मैं–सुना है, पर तुम्हारी जबानी सुनना चाहता हूँ।

माँ–अटल काफी दिनों से कह रहा था–'माँ, मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। मेरी इच्छा होती है कि नौकरी छोड़–छाड़कर कहीं एकान्त में जाकर रहूँ।' कभीकभी वह यह भी कहता–माँ, अगर तुम आज्ञा दो तो मैं ठीक ब्रह्मचारियों की तरह जीवन–यापन करूं।' इसी प्रकार अक्सर वह मुझसे आदेश लेने के लिए तंग करता था। सन् १९३२ में जो उत्सव हुआ था, उसके एक वर्ष पहले उसने नौकरी छोडने के लिए मुझसे आदेश मांगा था। उस समय मैंने उसे एक वर्ष इंतजार करने के लिए कहा था। सन् १९३२ के उत्सव के समय जब वह ढाका आया तब उसने मुझसे कहा – माँ, क्या मेरा एक साल पूरा नहीं हुआ?' मैंने उससे कहा – 'नहीं, अभी तुम्हारा एक साल पूरा नहीं हुआ है।' साल, महीना कुछ नहीं होता। भीतर से तैयार न होने पर समय कभी नहीं होता। बहरहाल, उस वर्ष के उत्सव के बाद हम लोग ढाका से चले आये। कुछ दिन इधर–उधर घूमने के बाद हम लोग नलहाटी गये। उन्हीं दिनों अटल को नलहाटी आने के लिए भोलानाथ ने तार भेजा ताकि अटल किसी प्रकार की आपत्ति न कर सके।

उन दिनों वह छुट्टी पर था। तार पाते ही वह चला आया। लेकिन मैंने देखा कि वह केवल शरीर लेकर आया है। मन, प्राण सब कुछ छोड़ आया है। अटल ने आते ही मुझसे प्रश्न किया – 'ऐसे समय में मुझे यहां क्यों बुलाया गया है? तुम लोग कौन सी खिचड़ी पका रहे हो? क्या तुम यह नहीं जानती कि इन दिनों तुम्हारी बहू की हालत ठीक नहीं है। उसे छोड़कर मैं कैसे आ सकता हूँ?' उसके प्रश्नों का उत्तर न देकर मैंने उसकी पत्नी के स्वास्थ्य के बारे में प्रश्न किया तो पता चला कि इन दिनों वह नैहर में है। मैंने कहा – 'माताजी इन दिनों अपने बाप के घर है, वह तो अच्छी तरह है।' लेकिन अटल ने इसे स्वीकार नहीं किया। वह बार–बार यही प्रश्न करता रहा कि आखिर उसे यहां क्यों बुलाया गया है?''

मैंने संक्षेप में बताया – 'यह देख लोगे।' इधर भोलानाथ की इच्छा हुई कि कुछ दिन बक्रेश्वर जाकर साधन–भजन करे। अन्त में यह तय हुआ कि भोलानाथ और कमलाकान्त बक्रेश्वर जायेंगे। अटल इस बात को सुनकर अस्थिर हो उठा। वह सोचने लगा कि अगर कमलाकान्त भोलानाथ के साथ जाता है तो उसे मेरे साथ रहना पड़ेगा। मेरे साथ उसे यहां–वहां घूमना पड़ेगा।

इस ऊहापोह में एक दिन उसने कहा–'माँ, मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकता।

अब तक यह नहीं कहा गया था कि तुम्हें यहां रहना पड़ेगा। उसने अपने आप कहा कि मेरे पास वह रह नहीं सकता। इस प्रकार तुम जान गये कि अटल को अपने पास रहने का आदेश मैंने नहीं दिया। लेकिन जिस त्याग की चर्चा वह करता रहा, अब घटना चक्र के कारण समझ गया कि त्याग करने में अक्षम है। इस बार पूजा के अवसर पर उसे यहां आने के लिए पत्र लिखा गया था। उसने उत्तर दिया–''इस अभागे को अब मत बुलाइयेगा। यह अभागा ठीक है। आदि।''

मैं – नलहाटी में अटल बाबू को बुलाकर तुमने उनका दर्प चूर्ण कर दिया था। शायद इसीलिए उसे बुलाया था?

माँ ने सिर हिलाकर इसे स्वीकार किया।

उन्नत पुरुष लोगों का संस्कार समझ लेते हैं

अन्य बातों के अलावा माँ शोगी बाबा के बारे में कहने लगीं। देहरादून के समीप एक स्थान है जहां एक साधु रहता है। इस स्थान के नाम पर बाबा का नाम शोगी बाबा हो गया है। यहां शोगी बाबा बड़े प्रसिद्ध हैं और उनके अनेक भक्त हैं। माँ के भक्तों में कुछ लोगों की इच्छा हुई कि माँ एक बार शोगी बाबा को जाकर देख आयें।

माँ ने कहा – ''इन लोगों का आग्रह देखकर एक दिन मैं साधुजी को देखने गयी। साधु को बिना सूचना दिये उनसे मिलने जा रही हूँ, यह सोचकर दो–चार लोग परेशान हो उठे कि कहीं साधु मेरा असम्मान न कर बैठे। इनमें से कोई आगे बढ़कर मेरे आने का समाचार साधु को देने चला गया। वह आदमी जब साधु से बातें कर रहा था, तब हम लोग भी पहुँच गये। देखा – साधु वृद्ध हैं। पैर में कष्ट है। एक भक्त उनकी मालिश कर रहा है। हम लोगों को आया देख उन्होंने अपने भक्त से एक आसन देने को कहा। जब मैं आसन पर बैठ गयी तो वे घुटनों के बल चलकर मेरे पास आये और बोले–'पति को क्यों छोड़ दिया है?''

''मैंने उनसे कहा–'पिताजी, मैंने पति का त्याग नहीं किया है। हम लोग एक साथ ढाका से रवाना हुए हैं। मेरे पति अपने काम से अन्यत्र गये हैं।'

''इसके बाद उनसे काफी बातचीत हुई। जब हम चलने लगे तब मुझे एक लाठी की ओर इशारा करते हुए बोले–'तुम्हारे साथ मेरा अनेक स्नेह है, वर्ना इसी लाठी से मारकर तुम्हें भगा देता।''

मैं – माँ, वह साधु कैसा है?

माँ – ठीक है। वे एक भाव लेकर साधन कर रहे हैं।

मैं – उनका प्रश्न सुनकर मुझे तो ऐसा नहीं लगता कि काफी उन्नतस्तर के संन्यासी हैं। क्योंकि तुम्हें देखकर वे यह नहीं समझ सके कि तुम्हारी स्थिति कैसी है?

माँ – व्यक्ति को देखकर या उसकी बात सुनकर जो लोग स्थिति को समझ लेते हैं, वे उन्नतस्तर के महापुरुष होते हैं।

इसके बाद माँ एक व्यक्ति की कहानी सुनाने लगीं। वे अपने कुलगुरु के निकट दीक्षा लेकर १०–१२ वर्ष तक गुरु के आदेश से शिव–पूजा करते रहे। लम्बे अर्से तक पूजा करने के बावजूद अपने में कोई परिवर्तन न देखकर उन्हें अपनी साधना के प्रति अश्रद्धा हो गयी। एक दिन श्रीराम ठाकुर के निकट जाकर अपनी स्थिति के बारे में उन्होंने बताया। राम ठाकुर ने उन्हें एक नाम देते हुए कहा कि तुम पूजा त्याग करके इस नाम को जपते रहना। अब उस व्यक्ति की स्थिति संकटपूर्ण हो गयी। वह सोचने लगा – अगर राम ठाकुर के आदेशानुसार पूजा – त्याग करता हूँ तो गुरु वाक्य अमान्य करने के कारण नरकगामी होना पड़ेगा और पूजा का त्याग नहीं करता तो महापुरुष के वाक्य के अमान्य का प्रतिफल भोगना पड़ेगा। 'इस वक्त क्या करूं?' इस प्रकार की नाना बातों की चिन्ता करते–करते उसकी हालत चिन्ताजनक हो गयी। आहार–निद्रा त्याग दिया और एक दिन पागलों की हालत में ढाका आश्रम आया।

उससे सारी बातें सुनने के बाद माँ बोलीं – "देखो, अगर पिताजी (राम ठाकुर) तुम्हें वास्तव में पूजा–त्याग का आदेश दिया होता तो तुम्हारे अन्तर में संशय उत्पन्न न होता। उनका आदेश पाते ही तुम पूजा–त्याग कर देते। तुम्हारे मन का संशय ही बता दे रहा है कि वास्तव में उन्होंने कोई आदेश नहीं दिया था। मेरा कहना यह है कि

तुम पूजा जारी रखो और पिताजी ने जो नाम दिया है, उसे भी जपते रहो। इससे किसी के आदेश का उल्लंघन नहीं होगा।''

माँ की बातों से उस व्यक्ति की दुश्चिन्ता समाप्त हो गयी और प्रसन्नचित्त से वापस चला गया।

श्री श्री माँ का भोग

३० आश्विन, गुरुवार (१७ अक्टूबर, सन् १९३५ ई.) को ज्योतिष बाबू के साथ परामर्श करने के बाद यह निश्चय हुआ था कि अगले दिन श्री श्री माँ को भोग दिया जायगा। भोग देने के लिए मैंने कलकत्ते से केवल एक सेर मूंग की दाल मंगवायी थी। शेष सामग्री देहरादून से खरीदी गयी। ज्योतिष बाबू ने दूध का प्रबंध किया। खिचड़ी, गोभी की तरकारी, लाबरा (सबजी मिलाकर), चटनी, पायस का आयोजन किया गया। एक सेर चावल और एक सेर दाल की खिचड़ी बनी। इसी अनुपात में अन्य सामग्री बनवायी गयी। लेकिन आश्चर्य की बात यह रही कि इतने लोग इतने कम सामानों से कैसे तृप्त हुए। यह एक अविश्वसनीय बात रही। दो सेर चावल–दाल की खिचड़ी से १३–१४ व्यक्तियों का भोजन पर्याप्त नहीं हो सकता। लेकिन यह हो गया। आश्चर्य का विषय यह रहा कि मेरे सिवा और किसी ने इस पर ध्यान नहीं दिया। मैंने ध्यान इसलिए दिया कि माँ आहार करते समय बार–बार कहती रहीं–''मैं तो सब खा गयी, बाकी लोग क्या खायेंगे ?''

माँ की यह बात सुनकर ही स्वल्प भोजन की ओर मेरा ध्यान आकर्षित हुआ था।

माँ के भोग के लिए सबेरे जल्दी बाजार गया था। थोड़ी देर बाद वापस आकर माँ के पास गया तो देखा – माँ गुफा के भीतर सोयी हुई हैं। वापस लौटकर मैं पश्चिमी हिस्से के बरामदे में जाकर बैठ गया। माँ को न देख पाने के कारण मन खिन्न हो गया। सोचा,

आज भर देहरादून रहना है। आज अगर माँ के साथ बातचीत न कर पाया तो बड़ा कष्ट होगा। इसी तरह ऊहापोह में खोया सा था कि सहसा माँ आ गयीं। उन्हें देखकर मन प्रसन्न हो उठा। मैंने पूर्ण भक्ति के साथ प्रणाम किया।

माँ जब आकर बैठीं तब मेरे अलावा अन्य कोई पास में नहीं था। ज्योतिष बाबू शारदा शर्मा को देखने गये हुए थे। जब मैं देहरादून आया तभी पता लगा था कि श्रीयुक्ता शारदा शर्मा आंव की बीमारी से परेशान हैं। स्वामी शंकरानन्द एक दिन रात भर जागकर उनकी सेवा करते रहे। ज्योतिष बाबू नित्य एक बार देखने चले जाते हैं। इधर महिलाएँ माँ का भोग बनाने में व्यस्त हैं। माँ को अकेले में पाकर मैं तरह–तरह के प्रश्न करने लगा–

गुरु शिष्य किस अर्थ में साथ–साथ रहते हैं?

मैं–माँ, मेरे गुरुदेव अक्सर शिष्यों के प्रश्नों के जवाब में कहा करते थे–"मैं तुम्हारे साथ–साथ हूँ।" बाबा विशुद्धानन्द भी यही बात अपने शिष्यों को कहा करते थे। तुम भी शायद इस तरह की बात कहती हो? इन बातों का अर्थ क्या है? किस अर्थ में गुरुदेव हमारे साथ हैं?

माँ–यह सब पिताजी से क्यों नहीं पूछ लिया?

मैं–जब मेरी दीक्षा हुई तब मैं बालक था और पिताजी ने यह सब नहीं बताया था ताकि उनसे पूछता।

माँ–यह बात अनेक अर्थों में बतायी जा सकती है। अब तुम्हें बता रही हूँ। पहले विषय को अखण्ड भाव में देखो। गुरु विश्व ब्रह्माण्ड के अणु–परमाणु में व्याप्त हैं। इस अर्थ से वे तुम्हारे साथ हैं। दूसरी ओर विचार करने पर देखा जाता है कि जगत् में एक सत् वस्तु है। वे ही गुरु हैं और वे ही शिष्य हैं। गुरु–शिष्य में कोई भेद नहीं है। इस अर्थ से गुरु तुम्हारे साथ हैं। इसके अलावा गुरु मंत्ररूप में

तुम्हारे साथ हैं। इसके बाद विषय को खण्ड रूप में देखने पर देखा जाता है कि योगीगण योग के जरिये एक ही समय अनेक जगह रह सकते हैं। शिष्य के मंगल के लिए गुरु योग शक्ति के जरिये खण्ड रूप में सभी शिष्यों के साथ सर्वदा रह सकते हैं। इस रूप में समझने पर बात सत्य है।

माँ का आत्म परिचय

माँ ने जब खण्ड–अखण्ड की चर्चा की तो मैंने उनसे प्रश्न किया – "माँ, जब तुम अखण्ड रूप में रहती हो तब क्या हम लोगों को देख पाती हो?"

इस प्रश्न को सुनकर माँ जरा गम्भीर हो गयीं। बाद में कहने लगीं – 'देखो, यह सब बातें किसी के सामने नहीं कहती। सभी बातें लोगों के सामने मेरे मुँह से नहीं निकलतीं। पर तुम्हें बता दे रही हूँ। तुमने प्रश्न किया है, मेरे मुँह से उसका उत्तर निकल रहा है। शायद तुम समझ सकोगे, इसलिए ऐसा हो रहा है।'

"तुमने जो खण्ड रूप की चर्चा की, वह भी मैं ही हूँ जबकि मैं खण्ड नहीं हूँ। तुमने अखण्ड के बारे में जो कहा, वह भी मैं हूँ, पर मैं अखण्ड नहीं हूँ। मैं असीम भी नहीं हूँ, सीमा के अन्तर्गत बद्ध नहीं हूँ। मैं युगपत् दोनों ही हूँ। अगर मुझे खण्ड कहोगे तो मुझे सीमा के भीतर बद्ध करना हुआ। लेकिन मेरी सीमा नहीं है, बन्धन नहीं हैं, दूसरी ओर सभी प्रकार के बन्धन हैं। मैं खा रही हूँ, घूम रही हूँ, यह सब मेरे खण्ड भाव हैं; इसलिए मैं ससीम हूँ और दूसरी ओर मुझे आहार–निद्रा की आवश्यकता नहीं है, अतः मैं सीमा शून्य हूं।"

आगे आप कहने लगीं – "जब कोई बच्चा मेरे पास आता है तब उसके साथ हँसी–मजाक करती हूँ। उसकी तरह हो जाती हूँ और जब कोई महापुरुष आता है तब मैं उनके अनुरूप बातें करती हूँ। कितनी आत्माएँ, केवल अच्छी आत्माओं के बारे में नहीं कह रही हूँ,

कितनी खराब आत्माएँ भी मेरे पास आती हैं, उस समय मैं उनके भाव के अनुसार बातचीत करती हूँ। उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती हूँ। क्षुद्र कीट–पतंग से लेकर अनन्त ब्रह्माण्ड भी मैं ही हूँ। तुमने पूछा है कि मैं अखण्ड रूप में तुम लोगों को देख पाती हूँ या नहीं। मेरा कहना है, तुम लोग ही क्यों, जिसने कभी मुझे नहीं देखा है, सुना नहीं है, उसकी आवश्यकता होने पर उसे भी मैं देख लेती हूँ, उसके अभाव को दूर कर देती हूँ।''

मैं – इससे स्पष्ट हैं कि जब हम तुम्हारे विषय में चिन्ता करते हैं तब तुम हम लोगों को देख पाती हो?

माँ – हाँ, जिस प्रकार टार्च जलाने पर समग्र चीजें देख लेते हो, तुम लोग जब मेरी चिन्ता करते हो, तब उसी प्रकार तुम लोगों की मूर्तियाँ मुझमें स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाती हैं। देखो, ज्योतिष के वर्तमान विचार काफी स्पष्ट हो गये हैं।

मैं – माँ, ज्योतिष बाबू में खूब भक्ति है।

माँ – विचार, भक्ति, कर्म, ज्ञान ये चारों एकत्र रहते हैं। इनमें से कोई एक अगर जरा अधिक प्रकट होता है तो उसी के द्वारा हम लोग मनुष्य की प्रकृति को समझ लेते हैं। जिसे भक्त कहते हैं, उसमें भी तीन गुण रहते हैं। लेकिन भक्ति का भाव अधिक रहने के कारण उसे भक्त कहते हैं। ज्योतिष में इस समय विचारों के भाव अधिक हैं। वह अनवरत मेरी परीक्षा ले रहा है। उस दिन करनपुर स्थित एक मकान में होनेवाले कीर्तन में मुझे ले गया। कीर्तन सुनते समय मेरे भाव में परिवर्तन हो गया। सचमुच भाव में परिवर्तन हुआ, ऐसी बात नहीं थी, पर ज्योतिष मुझे हमेशा जिस भाव में देखता आया है, उससे अलग देखा। दूसरे लोग इस पर गौर नहीं कर सके। कीर्तन समाप्त हो जाने के बाद वापस लौटते समय ज्योतिष ने मुझसे पूछा – 'अगर तुम असीम हो तो कीर्तन सुनने के बाद तुम्हारे में भाव क्यों होता है?'

मैं – माँ, यह बात तो ठीक नहीं है। अगर प्रत्येक बार कीर्तन सुनने के बाद तुम्हारे भाव में परिवर्तन होता तो यह कहा जा सकता है कि कीर्तन द्वारा तुम सीमाबद्ध हो। अगर ऐसा नहीं है तो कैसे कीर्तन को तुम्हारी सीमा है, कहकर निर्देश किया जाय।

माँ – (सन्तुष्ट होकर) ठीक कहते हो, लेकिन इसे पकड़ नहीं सका। इस तरह कितनी घटना हुई है जब मैं कीर्तन में झूमती रही। दूसरी ओर हजार कीर्तन होने पर भी मुझमें किसी प्रकार का भाव परिवर्तन नहीं हुआ है। ज्योतिष की बातें सुनने के बाद मैंने उससे कहा – 'मैं जो सोती हूँ, आहार करती हूँ, बातें करती हूँ, क्या यह सब मेरी सीमा के चिह्न नहीं हैं? तुम ऐसा क्या कहोगे जिसमें सीमा के चिह्न नहीं हैं?'' एक दिन मैं और ज्योतिष टहल रहे थे। सहसा ज्योतिष ने कहा – 'मैं पहले ठीक था। खाता, घूमता, नौकरी करता, मन में आया तो लोगों का उपकार करता था। तुम्हारे पीछे–पीछे घूमने से क्या लाभ हुआ? तुम कौन हो? क्यों तुम्हें लोग खिलायेंगे, पहनायेंगे, तुम्हारे साथ–साथ घूमेंगे।'' इस तरह की बातें करने लगा।

मैं – तुमने क्या जवाब दिया।

माँ – मैंने कुछ नहीं कहा। मैं हँसकर चुप रह गयी।

मैं – माँ, ज्योतिष बाबू के साथ मेरी बातचीत हुई थी। तुम्हारी जीवनी लिखने के बारे में। उन्होंने जो जवाब दिया था, उसे सुनने और आज तुम्हारी बातें सुनने के बाद मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है कि ज्योतिष बाबू तुम्हें ठीक से समझ नहीं पाये हैं। मैंने उनसे कहा था – 'देखिये, माँ की एक जीवनी लिखनी चाहिए। आप हमेशा माँ के निकट रहते हैं। आप में भक्ति भी खूब है और लिखने की क्षमता असाधारण है। ऐसी स्थिति में आपको माँ की जीवनी लिखनी चाहिए। इस पर ज्योतिष बाबू ने कहा–'माँ की इच्छा के बिना कुछ नहीं होगा। इसके अलावा मुझे ऐसा लग रहा है कि माँ शीघ्र ही आत्म प्रकाश

करेंगी। कारण – यह देखा गया है कि माँ अक्सर अपने को प्रकट करने जाकर ठहर जाती हैं और कहती हैं कि अभी प्रकट करने का अवसर नहीं आया है। मेरा विश्वास है कि माँ की इच्छा होने पर उनकी जीवनी प्रकट होगी।' ज्योतिष बाबू की बातें सुनकर उस वक्त उनकी बातों पर मैंने ध्यान नहीं दिया था। लेकिन आज तुम्हारी बातें सुनकर समझ रहा हूँ कि ज्योतिष बाबू तुम्हें ठीक से समझ नहीं सके हैं।'

माँ – तुमने क्या समझा?

मैं – तुम्हारी बातें सुनने के बात मैंने यह समझा कि तुम स्वप्रकाश, तुम सत् हो। ऐसा समय नहीं था जब तुम नहीं थी। ऐसा समय नहीं आयेगा जब तुम नहीं रहोगी। अब अगर यह कहा जाय कि तुम महामाया या तुम काली, दुर्गा मानव मूर्ति में आयी हो, तब तुम्हें सीमाबद्ध किया जा सकता है। यह तो तुम्हारा वास्तविक परिचय नहीं होगा। तुम तो युगपत् असीम और सीमाबद्ध हो। इसलिए जो स्वप्रकाश है, उसका प्रकाश कैसा? परिचय कैसा? यही ठीक है न माँ?

माँ हंसमुख भाव से बोलीं – "तुमने जो समझा है, वही ठीक है।"

माँ की बातें सुनकर प्रसन्नता से आत्म–विभोर हो उठा और एक अनजाना आनन्द का भाव मुझे अभिभूत कर गया। मैं सोचने लगा कि कितने जन्मजन्मान्तर के पुण्य से इनका सान्निध्य प्राप्त कर सका हूँ और 'माँ' कहकर पुकारने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। अर्जुन के निकट श्रीकृष्ण ने जिस प्रकार अपने स्वरूप का वर्णन किया था, ठीक उसी प्रकार का वर्णन है।

माँ की बातें सुनकर मैंने कहा – "तुमने जिस भाव की चर्चा की, इसे तो पुरुषोत्तम भाव कहते हैं?"

माँ ने कहा – "यह तुम लोग जानो।"

काशी आकर गोपीनाथ बाबू को माँ की सारी बातें बताते हुए मैंने कहा – "क्या यह सब पुरुषोत्तम भाव नहीं है?"

गोपीनाथ बाबू ने कहा – "पुरुषोत्तम के अलावा और क्या हो सकता है?"

बहरहाल इन बातों के अलावा माँ आगे कहने लगीं – तुम खोद–खोदकर प्रश्न करते हो यह सारी बातें समझ लोगे, इसलिए तुम्हें यह सब बातें बताईं।

मैं – माँ, तुम्हारी बातें समझ गया, कहना गलत होगा। यह ठीक है कि इन बातों से तुम्हारे स्वरूप के बारे में यत्किंचित् समझने का आभास प्राप्त हुआ है।

माँ – हाँ, यही ठीक है।

ठीक इसी समय कुछ लोग आ गये। हम लोगों की बातचीत बन्द हो गयी। इतने दिनों से माँ को जिस भाव में देखता आ रहा था, आज उस भाव में देख नहीं पा रहा था। बार–बार गीता की बातें याद आ रही थीं।

मैं सोचने लगा – मैं इसे किस रूप में ग्रहण करूँगा? कैसे प्रणाम करूँगा? ये तो मेरे अन्तर–बाहर विश्व ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। खण्ड रूप में देखने पर भी ये अखण्ड हैं, सामने देखने पर भी दूर हैं, बहुत दूर। ये ज्ञान, ज्ञेय, ज्ञानगम्य हैं। इन्हें अलग कर देने पर मेरी सत्ता कहाँ है? बैठकर आकाश–पाताल सोचने लगा। अब तक माँ के साथ हंसी–मजाक करता रहा, सोचकर मन–ही–मन अफसोस करने लगा। हाय, अब तक इस पुरुषोत्तम को किस दृष्टि से देखता रहा। आज तो मैंने सम्यक् उपलब्धि कर ली है। मैं बिन्दु हूँ, सिंधु की धारणा कैसे कर सकता हूँ? इच्छा हो रही थी कि अर्जुन की तरह कहता रहूँ –

"नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तुते सर्वत एव सर्व।"

देर तक इसी चिन्तन में रहा। कुछ लोग माँ के साथ बातें कर रहे थे, इधर ध्यान नहीं गया था। बाद में जब भीड़ छँट गयी तब माँ के साथ बातें करने लगा। अब हम काशी के खालिसपुर मुहल्ले के बारे में बात करने लगे। सारी बातें सुनने के बाद माँ ने मुझसे कहा – "उक्त माँ की उन्नत स्थिति है।"

फिर मेरी पत्नी की ओर देखती हुई माँ बोली – यह मत सोचना कि महिलाएं धर्म मार्ग में अग्रसर नहीं हो सकतीं। देखती नहीं, आजकल न जाने कितनी महिलाओं के बारे में सुनने में आता है।

इसी समय स्वामी शंकरानन्द भोजन करने के लिए बुलाने आये। हमलोग भी माँ के पास बैठकर माँ का भोजन देखने लगे। माँ के भोजन के बाद हम लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया।

शारदा–विवाह

आहार के बाद जब हम लोग माँ के पास आकर बैठे तब मैंने कहा – "माँ, आपने शारदा के विवाह की कहानी नहीं सुनाई?"

माँ ने कहा – "अच्छा कह रही हूँ।"

ठीक इसी समय ३–४ महिलाएँ माँ के साथ मिलने के लिए आयीं। इन लोगों को आया देख मैं बड़े हाल में चहलकदमी करने लगा। थोड़ी देर बाद माँ ने कहा – "पिताजी को बुलाओ। सेवा की कहानी सुनाऊँ।"

माँ शारदा को सेवा कहकर बुलाती हैं। यही नाम रखा है। इस नाम की सार्थकता है। माँ के निकट सुना था कि श्रीयुक्ता शारदा शर्मा लोगों की सेवा करने से परम आनन्द प्राप्त करती हैं। अगर किसी को किसी प्रकार की सहायता की जरूरत होती है तो वे आहार–निद्रा त्यागकर तुरंत दौड़ जाती हैं। यहाँ तक कि अगर माँ के साथ बातें कर रही हैं। हँसी–मजाक का दौर जारी है और इसी समय कोई

आकर यह सूचना दे कि अमुक महिला को प्रसव वेदना प्रारम्भ हो गयी है तो तुरंत बातचीत बन्द कर दौड़ी हुई चली जायेंगी। इसी प्रकार का भाव उनमें है। शायद इस प्रवृत्ति को देखकर माँ ने इनका नाम 'सेवा' रखा है। इसी प्रकार माँ ने अन्य लोगों के नये–नये नाम रखे हैं। स्वामी शंकरानन्द के कई नाम हैं। जैसे वशिष्ठ, नारद, दुर्वासा आदि। बहरहाल माँ के बुलाने पर मैं उनके पास जाकर बैठ गया। माँ शारदा देवी की कहानी सुनाने लगीं।

देहरादून में श्रीयुक्ता शारदा शर्मा नामक एक लेडी डाक्टरनी और उनकी बहन रहती हैं। ये लोग माँ के पास बराबर आते–जाते हैं और बड़े भक्त हैं। माँ ने कहा – "शारदा लड़की बड़ी अच्छी है। शुद्ध ब्रह्मचारिणी जिसे कहा जा सकता है, वही है। उम्र ३२–३३ लगभग है, पर एक दिन के लिए भी इनके अन्तर में कुभाव उत्पन्न नहीं हुआ है।"

महिला बड़ी सरल है। माँ से मुलाकात होने के पहले देव–देवी या धर्म के प्रति इनकी विशेष अनुरक्ति नहीं थी। लेकिन अन्य गुण जैसे सत्यवादिता, कर्तव्यनिष्ठा आदि इनमें खूब था। दोनों महिलाएँ जब माँ के पास आती थीं तब शक्ति नामक एक बंगाली महिला अक्सर माँ से कहती थी – "माँ, तुम इन लोगों का विवाह नहीं कराओगी?"

माँ हँसकर जवाब देतीं – "मैं वर की तलाश में हूँ।"

माँ ने कहा – "मैंने सेवा से कई बार पूछा कि वह विवाह करेगी या नहीं, किन्तु उसके उत्तर में कहा करती थीं – 'यह कैसे कह सकती हूँ? अगर कहती हूँ कि विवाह नहीं करूँगी और आगे चलकर विवाह हो जाय तो मेरी बात झूठ साबित होगी।' कभी–कभी अपने आप कहती है–'माँ, मुझे एक बच्चे की जरूरत है। उसे मैं बी.ए.एम.ए. पढ़ाऊँगी।' इन बातों में कुछ लज्जा है, वह यह नहीं समझ पाती। यहाँ तक कि वह अपने पिता से भी अपने विवाह के बारे में बातें करती थी।"

एक दिन शारदा और उसकी बहन मेरे पास बैठी थीं। उसी समय शक्ति ने मुझसे कहा – 'माँ तुम शारदा का ब्याह नहीं कराओगी?'

उसकी बात सुनकर मैंने शारदा से पूछा – 'क्या तुम विवाह नहीं करोगी।'

उस दिन वह अचानक बोल उठी – 'माँ, तुम तो सब जानती हो। तुम मुझे जो कुछ कहोगी, मैं वही करूँगी।'

मैंने कहा – 'अगर मैं एक मेहतर से विवाह करने को कहूँ तो क्या तुम करोगी?'

उसने कहा – 'तुम जो कुछ कहोगी, मैं वही करूँगी।'

शारदा की बहन से इसी प्रकार के प्रश्न किये, पर वह चुपचाप बैठी रही।

एक दिन मैंने शारदा और प्रकाशजी की लड़की को एक–एक फूलों का गुलदस्ता देते हुए कि कल जब तुम लोग मुझसे मिलने आओगी तब इस गुलदस्ते को लेती आना। शारदा बड़े यत्न के साथ गुलदस्ता अपने साथ घर ले गयी और उसे एक कमरे में रखकर ताला लगा दिया। प्रकाशजी की लड़की ने ले जाकर बड़े यत्न से रख तो दिया, पर ताला नहीं लगाया। दूसरे दिन भोर के वक्त मेरे यहाँ आते समय शारदा जब गुलदस्ता लेने उस कमरे में गयी तो देखा – वह गायब है। कमरे में जितनी चीजें थी, वह सब है, पर गुलदस्ता नहीं है। प्रकाशजी की लड़की की भी यही हालत हुई। कैसे गुलदस्ता गायब हो गया, कोई समझ नहीं सका। शारदा मेरे पास आकर उदास भाव से बोली कि गुलदस्ता खो गया है।

इसी दिन सबेरे आनन्द चौक[1] मन्दिर के पुजारी जीवों के संस्कार के बारे में तरह–तरह की बातें बता रहे थे। शारदा उसे बड़े ध्यान से सुन रही थी। पुजारी कह रहे थे कि जीव को संस्कार से मुक्ति

नहीं मिलती। भोग के द्वारा उस संस्कार को समाप्त करने के लिए बार-बार जन्म ग्रहण करना पड़ता है। इस बात को सुनकर शारदा सोचने लगी कि इतनी भयानक स्थिति होती है। अगर उसका विवाह-संस्कार है तो आजीवन साधन-भजन करने पर भी इस संस्कार को समाप्त करने के लिए पुनः जन्म ग्रहण करना पडेगा। शारदा मेरे निकट अपने इस संशय को कहने के लिए व्यग्र हो उठी। इस दिन जो लोग मुझसे मिलने आये थे, उनमें शक्ति नामक वह लड़की भी थी। उसने कहा – 'मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं शारदा की चोटी बना दूँ।'

मुझसे अनुमति पाते ही उसने शारदा के बालों को संवारकर मांग काढ़ दी। इस प्रकार की माँग यहाँ की विवाहित महिलाएँ काढ़ती हैं। ठीक इसी समय प्रकाशजी की लड़की फूलों की एक माला लेकर आयीं।

सवेरे के वक्त वह आम तौर पर मुझसे भेंट करने नहीं आती। इस प्रकार विवाह के सभी आयोजन होने लगे। जब वक्त काफी हो गया तब सभी अपने घर चले गये तब मुझे अकेले में पाकर शारदा ने कहा – 'माँ, पुजारीजी कह रहे थे कि जीव जबतक अपने संस्कार को भोग नहीं लेता तबतक वह कटता नहीं। अगर मैं आजीवन साधन-भजन करती रहूँ और मुझमें यदि विवाह-संस्कार हो तो क्या मुझे उस संस्कार को समाप्त करने के लिए पुनः जन्म लेना पड़ेगा?'

मैंने उसे बताया–'हाँ, यह तो होगा ही।'

यह बात सुनकर शारदा को बड़ा आघात पहुँचा। उसका दुःख दूर करने के लिए मैंने कहा – 'आओ, इस जन्म का विवाह तुम्हारा नारायण के साथ करा दूँ। तब तुम्हें गृहस्थी नहीं करनी पड़ेगी और

१. इस घटना के समय माँ देहरादून स्थित आनन्द चौक में रहती थीं। उत्तरकाशी से वापस लौटने के बाद वे आनन्द चौक में न ठहरकर राजपुर रोड स्थित कृष्णाश्रम में रहती थीं।

तुम्हारा विवाह–संस्कार दूर हो जायगा।' इसके बाद मैंने शारदा से कहा – 'इस वक्त जाकर पहले शक्ति को प्रणाम करो, क्योंकि इस विवाह में वही अगुआ है।'

मैं – तुमने तो विवाह के बारे में कहा। विवाह कराया कहाँ?

माँ – हाँ, शारदा को यह बात कहने के बाद कुछ हुआ, वह सब तुम्हें सुनने की जरूरत नहीं। इसके बाद शारदा शक्ति को प्रणाम करने गयीं। ज्योंही उसने शक्ति को प्रणाम किया त्योंही उसने घर से सिंदूर लाकर उसकी मांग भर दी। शक्ति ने ऐसा क्यों किया, यह बात वह स्वयं भी नहीं बता सकती, क्योंकि तब तक शारदा के विवाह की बात मेरे और शारदा के अलावा अन्य कोई नहीं जानता था। इसके बाद जब शारदा के विवाह की बात प्रकट हुई तब कुछ लोग कहने लगे – 'नारायण नामक किसी लड़के से शारदा का विवाह हो गया है।' कोई यह कहता – 'नहीं जी, नारायण तो साक्षात् भगवान हैं।' किसी ने आकर मुझसे कहा – 'शारदा के पति से मुलाकात कराइये।'

मैंने उन लोगों से कहा – 'देखो मानव–वर देखने के लिए तुम लोग आड़ में रहकर उसे देखने के लिए कितना प्रयत्न करते हो? शारदा के वर को देखने के लिए तुम लोगों को प्रयत्न करना पड़ेगा। साधन–भजन करना पड़ेगा। साधन भजन करो, निश्चित रूप से उसे देख पाओगे। जो शारदा के पति हैं, वे तुम्हारे भी पति हैं, विश्व के एकमात्र पति हैं।'

शारदा को पुत्र–लाभ

शारदा देवी के विवाह की कहानी समाप्त होने के बाद कैसे उन्हें पुत्र–लाभ हुआ था, वह कहानी भी माँ सुनाने लगीं।

माँ ने कहा – "एक दिन शाम को शारदा, हरिराम, लक्ष्मी एवं अन्य लोग मेरे पास बैठे थे। ठीक इसी समय न जाने किस विषय पर शारदा और हरिराम में बहस प्रारम्भ हो गयी। ज्योतिष और लक्ष्मी

बीच–बीच में कुछ छेड़छाड़ कर झगड़े को बढ़ा दे रहे थे। मैं चुपचाप बैठी सारी बातें सुनती रही। ठीक इसी समय किसी ने कहा – 'तुम लोग माँ के सामने झगड़ा कर रहे हो, शर्म नहीं आती?'

इस डांट को सुनकर सब चुप हो गये। दूसरे दिन मैंने हरिराम से कहा – 'शारदा, लक्ष्मी और तुम लोगों के बीच कल जो बहस हुई है, उसके प्रायश्चित के लिए तुम लोग कुमारी–पूजा करो।' यह आदेश सुनकर शारदा आदि बड़े उत्साह के साथ पूजा का आयोजन करने लगीं। पूजा के अवसर पर अनेक लोग उपस्थित थे। ज्योति भी था। ज्योति को किसी ने पूजा देखने के लिए नहीं बुलाया था। कुछ दिन हुए वह एम. ए. पास करने के बाद इलाहाबाद से देहरादून आया है। पूजा समाप्त होने पर मैंने कहा–'तुम लोगों ने भगवती की पूजा की। अब उनके निकट वर मांगो।'

''कोई कुछ कहे उसके पूर्व मैंने लक्ष्मी से कहा – 'देवी ने यही वर दिया कि आज से मैं लोगों की लड़की हुई ।' इसके बाद ज्योति का हाथ पकड़कर शारदा के पास लाकर मैंने कहा – 'यह लो, तुम्हारा एम. ए. पास लड़का ।''

''इसी समय एक व्यक्ति ने प्रस्ताव रखा कि इस समय जो लोग मौजूद हैं, इन लोगों का एक फोटो लिया जाय । मैंने कहा – 'जिन लोगों ने कुमारी–पूजा की है, वह उसी कुमारी को लेकर एक–एक फोटो खिंचवाये?' इस प्रकार तीन फोटो खींचे गये । एक में हरिराम, हरिराम की कुमारी और मैं । दूसरे में लक्ष्मी, लक्ष्मी की कुमारी और मैं तथा तीसरे में शारदा, उसकी कुमारी और मैं । इस फोटो में कुमारी की आकृति खराब हो गयी थी । उसने कुमारी का फोटो निकालकर फोटो देने को कहा। मैंने कहा कि उस फोटो में बिना कोई परिवर्तन किये, जैसी खींची गयी है, उसी तरह की कापी लाकर दो । उसने वैसा ही किया । फोटो आने पर देखा कि फोटो में कुमारी को आवृत्त

कर एक शिशु की आकृति उभर आयी है । यह शिशु कहाँ से आ गया, कोई समझ नहीं सका।''

मैं – माँ, कहीं वह शिशु ज्योति के बचपन का चेहरा तो नहीं है ?

माँ – (हंसकर) तुमने पहले यह कहा । अब तक किसी ने ऐसा नहीं कहा था । (भ्रमर से) ले, सुन ले, पिताजी क्या कह रहे हैं । और लोगों को बुलाकर माँ मेरी बात कहने लगी । मैंने सोचा, शायद यह बात माँ मेरे मुँह से कहलाना चाहती थी ।

इस तरह की बातें करते–करते चार बजे गये । इसी समय एक फोटोग्राफर आया । भ्रमर अपने शिवलिंग को लेकर माँ के साथ एक फोटो खिंचवायी। यह शिवलिंग (वानलिंग) माँ ने भ्रमर को दिया था। इसमें एक विशेषत्व है। इस लिंग के रंग में दिन–प्रति–दिन परिवर्तन होता जा रहा है और इसके भीतर माँ की मूर्ति की तरह एक मूर्ति क्रमशः प्रकट होती जा रही है । दो चित्र खींचे गये । एक में माँ भ्रमर के गले में हाथ डालकर खड़ी हैं । दूसरे में भ्रमर माँ की गोद में बैठी हैं । भ्रमर को माँ 'बड़ी माँ' कहकर पुकारती हैं । उसके प्रति माँ का असीम प्रेम है ।

शाम होने के कुछ पहले होटल वापस चला आया । शायद आज माँ टहलने नहीं गयीं । शाम के बाद पुनः माँ के पास जब आया तो देखा–माँ के चारों ओर अनेक काश्मीरी और बंगाली महिलाएं बैठी हैं। नक्षत्रों के बीच जिस प्रकार चाँद शोभायमान रहता है, ठीक उसी प्रकार इन सुन्दिरयों के बीच माँ लग रही थीं । माँ को आज जिस रूप में देखा, वैसा इसके पूर्व कभी नहीं देखा था । शांत, हास्य मूर्ति, आकृति से ज्योति चारों ओर बिखर रही थी। बदन पर अण्डी की एक चादर थी । शांत–सौंदर्य एवं शुभ्रता की जैसे अद्वितीय प्रतिमूर्ति थी।

महिलाएं माँ को भजन गाकर सुना रही थीं । सभी के अनुरोध पर माँ एक भजन गाने लगीं । यह भजन कितना मधुर, कितना दिव्य था, उसे भाषा द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सकता । अत्यन्त मीठे स्वर में भाव विह्वल नेत्रों से झूमती हुई माँ गाने लगी –

"हरि बोल, हरि बोल हरि, हरि बोल
केशव माधव गोविन्द बोल"

महिलाएं भी साथ–साथ गाती रहीं । मुझे ऐसा लगा जैसे आज स्वर्ग से सभी देवतागण इस गीत को सुनने के लिए आ गये हैं। जबतक माँ गा रही थीं तबतक हम लोग मंत्रमुग्ध होकर सुन रहे थे । इसी प्रकार नाम–गीत गाते रहने पर भगवान् भी छिपे नहीं रह सकते । इस गीत की स्मृति को भुलाया नहीं जा सकता ।

माँ अधिक देर तक गा नहीं सकीं । बाद में महिलाएँ गाती रहीं। कल मैं रवाना हो जाऊँगा । फलतः आज अधिक रात तक बिना रुके होटल वापस आ गया ।

देहरादून से प्रस्थान

१ कार्तिक, शुक्रवार, बंगला १३४२ सन् (१८ अक्टूबर, १९३५ ई.) हम लोग हरिद्वार रवाना होने वाले हैं । सवेरे माँ को देखने के लिए गया। सोचा, इसी समय विदा लेकर लौट आऊँगा । हमारी गाड़ी ९ बजे रवाना होगी । फलतः पुनः माँ के पास जाना संभव नहीं होगा।

सूर्योदय के पूर्व ही माँ के यहां हाजिर हो गया । अभी अंधकार था। यहां आकर देखा कि माँ के निकट ज्योतिष बाबू, स्वामी शंकरानन्द, मौनी माँ[1] लक्ष्मीबाई, भ्रमर तथा स्थानीय दो–तीन महिलाएँ हैं । स्थानीय महिलाओं में एक महिला और उसकी पुत्री है । पुत्री बनारस हिन्दू

१. आप श्रीयुक्त अवनीमोहन बसु महाशय की पत्नी हैं । स्वामी और पुत्र के रहते हुए भी सन्यासिनी की तरह जीवन व्यतीत करती हैं। आपका नाम श्रीमती मनोरमा बसु है । माँ इन्हें 'मौनी माँ' कहती हैं।

विश्वविद्यालय में बी.ए. में पढ़ती है । ये लोग नित्य भोर में ४ बजे आकर माँ को भजन सुनाती हैं । जब ये लोग आकर भजन गाना प्रारम्भ करती हैं तब माँ सोकर उठ जाती हैं । चूंकि भ्रमर माँ के पास सोती हैं, इसलिए वह भी जाग जाती है । इससे उसे तकलीफ होती है ।

एक दिन माँ हँसती हुई बोली – "भ्रमर मुझसे एक दिन कहने लगीं– 'माँ, इनके भजन पर तुम क्यों जागकर उठ जाती हो ? सोती रह सकती हो । तब मैं भी सोती रह सकती हूँ । इतने भोर में उठा नहीं जाता ।' मैंने इससे कहा कि इनके आने पर मैं सोयी नहीं रह पाती ।'

हम लोगों ने भी देखा है कि जब कोई दर्शनार्थी आता है तब माँ बिना बातचीत किये रह नहीं पातीं । कभी लोगों से कमरा भरा रहने पर वे सिर से पैर तक चादर ओढ़कर सोयी रहतीं । बाहरी तौर पर मां उदासीन रहती हैं । माँ का कारबार केवल मन को लेकर है ।

यहाँ आते ही देखा – ज्योतिष बाबू दबे स्वर से स्वरचित एक गीत गा रहे हैं । गीत मुझे अच्छा लगा । इसके बाद सभी लोग मिलकर भजन करने लगे । यह भजन कितना सुन्दर था, उसे बिना सुने समझा नहीं जा सकता । धीरे–धीरे अन्धकार घटता गया और प्रकाश बढ़ता गया । सामने वृक्षों पर पक्षियाँ चहचहा रही हैं । माँ निश्चित रूप से शायद मंसूरी पहाड़ी की ओर देख रही हैं । उन्हें देखने पर लगता है जैसे कोई ध्यानरता योगिनी मूर्ति हैं । रात्रि और दिवा के संधिक्षण में कुहेलिकाच्छन्न जगत् के बीज, संगीत की ताल पर मानो आलोक रेखा प्रस्फुटित हो रही थी । इस गीत को सुनकर स्वतः जगज्जननी के चरणों पर मनप्राण निछावर हो रहे थे । इस स्वर्गीय सुख को छोड़कर आज चले जाना पड़ेगा । विश्व–जननी के जीवन्त विग्रह के निकट विदा माँगनी पड़ेगी, जानकर आँखें छलछला आयीं । अत्यन्त कठिनाई से इन आँसुओं को मैंने रोका । सूर्योदय हो गया ।

ज्योतिष बाबू माँ के पास से चले गये । गीत चलता रहा । मैं भी मन–ही–मन माँ को प्रणाम करने के बाद उठकर खड़ा हो गया। अपनी पत्नी और लड़की को लेकर रवाना हो गया । कमरे से बाहर निकलते ही देखा – ज्योतिष बाबू पूर्ववाले बरामदे में बैठे हैं । मैंने उन्हें प्रणाम किया । उन्होंने आवेग के साथ आलिंगन पाश में बाँध लिया । माँ के प्रति अनाविल आदर के कारण माँ के प्रत्येक भक्तों के प्रति इतने स्नेहशील हैं । अत्यन्त कठिनाई के साथ उनसे दो–चार बातें की । आँखों के पानी को रोकने के लिए मुँह दूसरी ओर फेर लिया । भ्रमर हम लोगों के साथ सदर दरवाजे तक आयी।

होटल में आकर जलपान किया । हम स्टेशन रवाना होने की तैयारी कर ही रहे थे कि ठीक उसी समय ज्योति बाबू आ गये। बोले –''आप लोग आज ही जा रहे हैं ?''

मैं–हाँ ।

ज्योति–माँ के साथ मुलाकात नहीं करेंगे ?

मैं–भोर के वक्त ही जाकर माँ से मिलकर विदा ले आया हूँ।

ज्योति–तब माँ ने मुझे यहाँ क्यों भेजा ? मैंने यह भी सुना कि उन्होंने कहा–'माँ ने आप लोगों को भेंट करने के लिए बुलवाया है ।'

ज्योति बाबू को विदा करते हुए मैंने कहा–''चलिये, मैं आ रहा हूँ ।''

विदा लेकर वापस आने के बाद मां ने मुझे क्यों बुलाया, समझ नहीं सका । बहरहाल, एक टाँगा लेकर सभी के साथ माँ के पास आया। आते समय होटल के मैनेजर से कहता आया कि मेरा बिल तैयार कर रखे ।

माँ के पास आते ही देखा – वे हम लोगों के आने की प्रतीक्षा में सामने के बरामदे पर खड़ी हैं । मैंने मां से पूछा – ''मां, मुझे बुलवाया है क्या ?''

माँ – (हँसकर) मैं तो नहीं बुलवाया । मैं बुला रही हूँ, ज्योति ने शायद ऐसा कहा है ?

मैं – हां ।

लेकिन ज्योति बाबू ने इसे अस्वीकार कर दिया । मैं यह सुनकर अवाक् रह गया । सभी हँसने लगे ।

मां – तुम्हारे जाने के बाद मैंने ज्योतिष से पूछा कि क्या आज तुम चले जाओगे ? ज्योतिष ने कहा – 'हाँ, अमूल्य बाबू आज विदा हो रहे हैं।' ज्योति का जवाब सुनकर मैं कुछ नहीं बोली । लेकिन मैंने यह देखा कि पिताजी (अर्थात् मैं) पुनः लोट रहे हैं । इसके कुछ देर बाद ज्योति आ गया। उसने भी तुम्हारे बारे में पूछा । मैंने जब उसे यह कहा कि तुम लोग आज जाओगे तब इसने व्यस्त भाव से कहा – 'तब उनसे मुलाकात कर आऊँ ।' मैंने उससे कहा – 'तुम्हारी इच्छा हो तो जाओ' इसके बाद जो कुछ हुआ, उसे तुम जानते हो। मैंने देखा था कि तुम लौटकर आये हो, इसीलिए तुम वापस आये हो ।

इतना कहने के बाद माँ हँसने लगीं । साथ ही सभी हँसने लगे। समझते देर नहीं लगी कि मां की इच्छानुसार मुझे यहाँ पुनः आना पड़ा। क्योंकि माँ ने एक दिन ज्योतिष बाबू से कहा था – 'अगर मैं न बुलाऊँ तो किसी की इतनी हिम्मत है जो मेरे पास आये ।'

मैं चुपचाप खड़ा रहा ।

माँ कहने लगीं – 'तुम दोनों को सद्गुरु का आश्रय प्राप्त हुआ है । एक दूसरे को धर्म मार्ग में चलने में सहायता देते रहना । पति–पत्नी भिन्न पथ के पथिक होने पर अनेक बाधाएँ उपस्थित होती है। तुम लोग आपस में एक दूसरे की सहायता करते हुए धर्मपथ पर बढ़ते रहो।'

"और देखो, ढाका के आश्रम में जाकर कहना कि वे लोग मुझे जिस दिन ले जाना चाहेंगे, मैं उसी दिन चली आऊँगी ।"

मैंने सजल नयन से कहा – "मां, हम लोग तुम्हें नहीं ले जा सकते। आप अपनी कृपा से आइयेगा ।"

माँ ने आगे कहा – "सभी को कह देना कि दिन जो चला जाता है, वह वापस नहीं आता। फलतः चाहे इच्छा से या अनिच्छा से सभी लोग नाम लेकर समय गुजारें । यही मेरी प्रार्थना है ।"

मैंने मां को प्रणाम किया । मेरी पत्नी के प्रणाम करने पर उसकी चिबुक को पकड़कर उन्होंने प्यार किया । ठीक इसी समय गोपालजी[1] को देखकर मैं उन्हें प्रणाम करने गया । भक्त चूड़ामणि वृद्ध मेरी दृष्टि में श्रद्धेय हैं । उन्होंने मुझे प्रणाम करने नहीं दिया । मेरे हाथों को पकड़ कर अपनी ओर खींचते हुए आलिंगन में बांध लिया । बाद में बोले – "माँ की कृपा से हम सब एक हैं ।"

वाह ! माँ के भक्तों का कितना सरल मधुर भाव है । हम लोगों को आलिंगन करते देख माँ ने कहा – "यह (अर्थात् गोपालजी) प्रतिदिन इतनी देर तक नहीं रहता । आज तुम्हारे साथ इस रूप में भेंट होगी, शायद इसीलिए रह गया । अन्य जितने लोग वहां थे, सभी लोगों को प्रणाम करने के बाद मैं टांगे पर सवार हो गया । इस प्रकार विदा लेना कितना हृदय–विदारक होता है, इसे भुक्तभोगी अनुभव करते हैं। बड़े अच्छे लग्न पर ढाका से रवाना हुआ था, इसीलिए ये चार दिन माँ के निकट अत्यन्त आनन्द के साथ गुजर गये ।

---

१. श्रीयुक्त द्वारकानाथ रायना । देहरादून के वकील हैं । आनन्द चौक में रहते हैं । माँ के इनका नाम गोपालजी रखा हैं । गोपालजी और इनकी पत्नी माँ के भक्त हैं ।